RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-04
April-2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com [UGC Listed Journal]

संस्कृत नाटकों में नारीवादी यौनिकता– एक आलोचनात्मक मूल्यांकन

रजनी

पीएच.डी. शोधार्थी, राजनीतिक विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

ARTICLE DETAILS

Article History
Published Online: 15 April 2019

Keywords
स्त्री यौनिकता, नाटक, राजनीति, रूढ़िवाद, उदारवाद।

ABSTRACT

भारत में नारी यौनिकता का सशक्तिकरण युगो–युगों में परिवर्तित रहा है जिसकी एक सकारात्मक रूप में शुरूआत हमारे सांस्कृतिक स्रोतों में रही है जैसे वेद, पुराण, शास्त्र, नाट्य, काव्य, महाकाव्य इत्यादि स्रोत भारत की संस्कृति और धरोहर है जिसके आधार में नारी का स्थान समाहित है जहां स्त्री की यौनिकता को पवित्र रूप में बताया गया है जैसा कि वेंडी डोनिजर अपनो कृति द हिंदू में लिखती हैजो कि नारी की यौनिकता को एक सकारात्मक दशा और दिशा में दर्शाता है। नारी यौनिकता एक शक्ति के प्रदर्शन को दर्शाती है समकालीन युग में नारी समाज के विचारों को परिवर्तित करने की क्षमता रखती है जिसका सबसे बड़ा स्रोत नारी का बाजार में होने वाला आगमन है जिसके बिना कोई कार्य संभव नहीं फिर भले होवह कोई फिल्म, नाटक, विज्ञापन, व्यापार हो यहां तक की राजनीति जैसे सभी बड़े क्षेत्रो को अपने में समाहित कर लिया है।

स्त्री यौनिकता व संस्कृत नाटको का सैद्धांतिक प्रारूप

स्त्री यौनिकता स्त्री के यौन व्यवहार, यौन पहचान, मनोवैज्ञानिक, शारीरिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, और यौन गतिविधि के धार्मिक या आध्यात्मिक पहलुओं सहित प्रक्रियाओं और व्यवहार की एक विस्तृत श्रृंखला को शामिल करता है। मानव यौनिकता के एक भाग के रूप में स्त्री यौनिकता के विभिन्न पहलुओं और आयामों को नैतिकता और धर्मशास्त्र के सिद्धांतों द्वारा भी इसे संबोधित किया गया है। कोई भी ऐतिहासिक युग और संस्कृति में, दृश्य कला, साहित्यिक और साथ ही लोकप्रिय संस्कृति सहित कला, मानव कामुकता पर समाज के विचारों का एक बड़ा भाग प्रस्तुत करती है, जिसमें निहित स्त्री यौनिकता और व्यवहार की अभिव्यक्तियाँ (गुप्त) और स्पष्ट दोनों पहलू शामिल होते हैं।[1] यही यौनिकता प्राचीन साहित्यों में एक सकारात्मक प्रारूप को प्रदर्शित करती है जिसमें अहम् भूमिका निभाने वाले साहित्यों में नाटको को अहम माना जाता है क्योंकि नाटक और यौनिकता दोनो ही ऐसे तथ्य है जो राजनीति को दर्शाते है, राजनीति का प्रतिनिधित्व करते है। इसका इतिहास अत्यंत प्राचीन है जिसका विवरण विश्व के विभिन्न ग्रन्थों में देखनें को मिलता है । भारत में इसका प्रारंभ रामायण और महाभारत काल से भी पहले देखा जाता है। इन कालों का वर्णन कई प्रकार से किया गया है जिसमें एक प्रकार नाटको का है नाटको ने व्यवहारिक तौर पर समाज का दर्पण दिखाया है। इस समाज के व्यवहारिक दर्पण को अर्थात नाटक और नाटको में उपस्थित पात्र जिससे आश्य स्त्री–पुरूष के बीच संबंध व उनके प्रस्तुतिकरण के रूप से है।नाटक समाज का दर्पण है जिसका प्रतिनिधित्व राजनीति द्वारा किया जाता है जो समाज को प्रदर्शित करते है यह समाज में समाज के व्यवहार अर्थात् संस्कृति, परंपरा जैसे तत्वो को दर्शाते और अभिव्यक्त करते है। इसके द्वारा समुदाय और सामाजिक व्यवस्था को प्रमुखता दी जाती है। फिर भी, पारंपरिक रूप से यह अधिनियमितियों पर आधारित एक राजनीतिक दृष्टिकोण भी प्रस्तुत करता है जिसमें अहम भूमिका थिएटरो द्वारा निभाई जाती है। इन नाटको में अहम भूमिका हमेशा से ही दो पात्र निभाते आ रहे है जिसमें प्रथम पात्र पुरूष जिसे सबसे उच्च, सर्वोत्तम माना जाता रहा है वहीं दूसरा पात्र स्त्री जो पितृसत्ता के घेरे में जकड़ी हुई द्वितीय अर्थात दोयम दर्जे पर रखा गया है और यही रूप राजनीति को प्रदर्शित करता है। विक्टर टर्नर, तर्क देते हैं कि परंपराए सभी नाटक और उन्हे प्रस्तुत किए जाने वाले साधन अर्थात थिएटर की गतिविधि (साथ ही साथ सांसारिक कार्रवाई और बातचीत के अन्य प्रकार) का आधार बनती है। यह निश्चित रूप से दुनिया भर में सभी ज्ञात संस्कृति का मानचित्रण प्रस्तुत करने का साधन है। यह साधन विशिष्ट परंपराओ के उद्देश्य और विभिन्न संस्कृति और परंपराओ के बीच सभी महत्वपूर्ण अंतरों की दृष्टि को खो कर एक नया रूप प्रस्तुत करने का मार्ग प्रशस्त करता है।[2]

[1] *Bailey, J. Michael; Vasey, Paul; Diamond, Lisa; Breedlove, S. Marc; Vilain, Eric; Epprecht, Marc (2016). "Sexual Orientation, Controversy, and Science".*

[2] Gray, S. (1990) 'Women in South African theatre'

RRIJM 2015, All Rights Reserved

भारतीय शास्त्रीय नाटक शब्द प्राचीन भारत में नाटकीय साहित्य और प्रदर्शन की परंपरा को दर्शाता है। भारतीय उपमहाद्वीप में नाटकीय प्रदर्शन के मूल का पता 200 ईसा पूर्व के रूप में लगाया जा सकता है, इसम समाहित नाटक को संस्कृत साहित्य की सर्वोच्च उपलब्धि माना जाता है।[3] बौद्ध दार्शनिक अस्वघोशा जिन्होंने बुद्धचारिता की रचना की को माना जाता है कि वे पहले संस्कृत नाटककार थे, अपने नाम के अतिरिक्त, एक शास्त्रीय संस्कृत नाटक संस्कृत और प्राकृत दोनां भाषाओं का उपयोग करते है जो इसे द्विभाषी प्रकृति प्रदान करता है।[4] पातंजलि द्वारा महाभाष्य में संस्कृत नाटक के बीज क्या हो सकते हैं यह इसका प्रारंभिक संदर्भ है, व्याकरण का यह गंथ भारत में रंगमंच के प्रांरभ के लिए एक निश्चित अवधि प्रदान करता है।[5]चौथी–पाँचवीं शताब्दी ईस्वी में कालिदास, वास्तविक प्राचीन भारत के महानतम संस्कृत नाटककारों में से एक थे। कालिदास द्वारा लिखे गए तीन प्रसिद्ध अलंकारिक नाटक हैं– मालविकाग्निमित्रम (मालविका और अग्निमित्र), विक्रमोवंशियम (विक्रम और उर्वशी से संबंधित), और अभिज्ञानशाकुंतलम (शकुंतला की मान्यता) जो कि आखिरी महाभारत में एक कहानी को व्यवहारिक रूप प्रदान करते है जिसे सबसे अधिक प्रसिद्धि प्राप्त है। यह अंग्रेजी और जर्मन में अनुवादित होने वाला प्रथमसाहित्य था, जिसमें शकुंतला(अंग्रेजी अनुवाद में) नाटक ने गोएथ्स फॉस्ट (1808–1832) को प्रभावित किया, अगले महान भारतीय नाटककार भवभूति (सी 7 वीं शताब्दी सीई) थे जिनके द्वारा प्रसिद्ध निम्नलिखित तीन नाटक लिखे गये–मालती–माधव, महावीरचरित और उत्तर रामचरित। इन तीनों में, अंतिम के दो नाटक रामायण के पूरे महाकाव्य को समाहित करते हैं। शक्तिशाली भारतीय सम्राट हर्ष (606–648) को तीन नाटक लिखने का श्रेय दिया जाता है। रत्नावली, प्रियदर्शिका और बौद्ध नाटक नागानंद। अन्य प्रसिद्ध संस्कृत नाटककारों मं ,शुदका, भासा और असवघोशा शामिल हैं।

संस्कृत नाटको में स्त्रियों की यौनिकता के प्रस्तुतिकरण पर कुछ नाटको के रूप इस प्रकार है–जैसे वेणी संहारम् जो भट्टनारायण द्वारा रचित प्रसिद्ध संस्कृत नाटक है। वेणी का अर्थ है, स्त्रियों का केश अर्थात चोटी और संहार का अर्थ है सजाना, व्यवस्थित करना या गुंफन करना। जिसमें दुःशासन, द्रौपदी के खुले हुए केश पकड़ कर बलपूर्वक घसीटता हुआ द्युतसभा में लाता है, तभी द्रौपदी प्रतिज्ञा करती है कि जब तक दुःशासन के रक्त से अपने बालों को धोएगी नहीं तब तक अपने बालों को ऐसे ही बिखरे हुए रखेगी। भट्टनारायण रचित इस नाटक के अंत में भीम दुःशासन का वध करके उसका रक्त द्रौपदी के केश में लगाते हैं और चोटी का गुंफन करते हैं। इसी प्रसंग के आधार पर भट्ट नारायण ने इस नाटक का शीर्षक वेणीसंहार रखा है।[6] दूसरा उत्तररामचरित् नाटक है जिसमें इसमें 7 अंको में राम के उत्तर जीवन, जो अभिशेक के बाद आरंभ होता है, को चित्रित किया गया है इस नाटक में सीता निर्वासन की कथा को मुख्य रूप से निबद्ध किया गया है। कवि ने कथा में कई काल्पनिक परिवर्तन किए हैं जिनसे चिरपरिचित रामकथा में रोचकता आ गई है। यह वीर रसप्रधान नाटक है। अंतर यह है कि रामायण में जहां इस कथा का पर्यवान(सीता का अंतर्धान) शोकपूर्ण है, वहां इस नाटक की समाप्ति राम सीता के सुखद प्रेम मिलन से की गई है।[7] तीसरा नाटक माल्विकाग्निमित्रम् है जिसमें कालीदास द्वारा रचित प्रथम माल्विकाग्निमित्रम् नाटक के द्वारा माल्विका और अग्निमित्र के संबंध अर्थात उनकी प्रेम कहानी बताता हैं। जिसमें अग्निमित्र, निर्वासित नौकर माल्विका को तस्वीर के प्रेम में पड़ जाता है तथा रानी का अपने राजा के प्रेम की अति का पता लगाने पर रानी द्वारा माल्विका को कैद कर लेना परंतु अंत में उसके शाही जन्म का पता लगना तथा रानी के रूप में उसे स्वीकार कर लिया जाता है।[8] चौथा नाटक विकमोवंशियम् है, यह नाटक पांच किया का संस्कृत नाटक है। जो 14वी सदी में राजा पुरूरवस के वैदिक प्रेम कथा और एक खगोलीय अप्सरा के उर्वशी के साथ प्रेम कथा को प्रस्तुत करता है। यह कालीदास द्वारा लिखित तीन नाटकों में से दूसरा नाटक है।[9] पाचंवा नाटक अभिज्ञान शाकुंतलम ह महाकवि कालिदास का यह विश्वविख्यात नाटक है जिसका अनुवाद प्रायः सभी विदशेी भाषाओं में हो चका है। इसमें राजा दुष्यतं तथा शकुंतला के प्रणय, विवाह, विरह, प्रत्याख्यान तथा पुनर्मिलन की एक सुंदर कहानी है। पौराणिक कथा में दुष्यंत को आकाशवाणी द्वारा बोध हाता है पर इस

[3]Brandon, James R. 1981. Introduction. In Baumer and Brandon

[4]Rachel Van M. Baumer; James R. Brandon (1993). *Sanskrit Drama in Performance*.

[5]Richmond, Farley P., Darius L. Swann, and Phillip B. Zarrilli, eds. 1993. *Indian Theatre: Traditions of Performance.*

[6] Parameshwardin Pandey and Awani kumar, (2012), Venisamhara Nataka of Bhattanarayana, edi. 'Sudha'-Sanskrit & Hindi Commentaries,

[7] Shastri Ghate, (1895), The *Uttara Rama Charita* of Bhavabhuti. With Sanskrit commentary

[8]*Kalidasa (1891). The Malavikágnimitra: A Sanskrit play by Kalidasa*

[9]Pandit, P. S. (1879). The Vikramorvashiyam: A Drama in Five Acts by Kalidasa

RRIJM 2015, All Rights Reserved

नाटक में कवि ने मुद्रिका द्वारा इसका बोध कराया है।[10] छठा नाटक स्वपनवासदत्ता है इसके रचियता भास संस्कृत साहित्य के प्रसिद्ध नाटककार थे। जिसमें एक राजा के अपने रानी के प्रति अविरहनीय प्रेम और पुनर्मिलन की कहानी है।[11] वही सातवां नाटक रत्नावली है यह हर्ष की नाट्यकृति रत्नावली एक बहुत ही सफल एवं महत्वपूर्ण नाटिका है। इसमें भी उदयन और रत्नावली की प्रेमकथा नाटिका के माध्यम से वर्णित है।[12] आठवां नाटक कर्णसुंदरी है यह राजशेखर की रचनाओं जैसे विक्षषालभंजिका के बाद कालकमानुसार कर्णसुदंरी नाटिका उपलब्ध होती ह। यह महाकवि विल्हण की 11वी शती(1075 ई.) के उत्तरार्ध की रचना है। इसकी रचना अण्हीलवाड़ के राजा कर्णदेव त्रैलोक्यमल्ल के सम्मान में और उसकी वृद्ध अवस्था में कर्णाटराज जयकेशी की पुत्री मियाणमिल्लदेवी के साथ उसका विवाहोत्सव मनाने के लिए की गयी थी। नटिका में बिल्हण ने अपने आश्रयदाता राजा कर्णदेव त्रैलोक्यमल का जयकेषिन् की कन्या के साथ विवाह के वृत्त को उदात् शैली में नाट्यबद्ध किया है। प्रस्तुत नाटिक का नायक कर्णदेव नाटिका के प्रकृति के अनुरूप धीरललित नायक के रूप में चित्रित हुआ है।[13]

संस्कृत साहित्य अपने आप में समृद्ध व व्यापक रूप लिए हुए है। जिसमें नाटको का एक व्यापक रूप देखने को मिलता है। संस्कृत नाटक कई पक्षो के लिए जाने जाते है जैसे कि संस्कृति, परंपरा, धर्म, इत्यादि। परतुं इन सभी पक्षो में एक पक्ष ऐसा भी है जिसके लिए यह जाना जाता है परतुं इस पर अभी तक कोई ध्यान नहीं दिया गया है, और वह पक्ष है स्त्री की यौनिकता। इस पक्ष ने नाटकों में स्त्री यौनिकता(सेक्सुअलिटी)को प्रश्न के कटघरे में ला खड़ा किया है, कि क्यों और कैसे इस पक्ष को अनदेखा किया गया। इस पक्ष को अनदेखा करने के पीछे किस प्रकार की राजनीति शामिल है? इसी कारण संस्कृत नाटक में स्त्री यानिकता(सेक्सुअलिटी)के पक्ष पर प्रश्न के साथ जुड़े प्रसंगो खासतौर पर इन प्रसंगो से जुड़े हुए इनके व्यवहार, प्रकियाओं के विविध रूपों का एक सघन विश्लेषण प्रस्तुत करना है। इसके अतिरिक्त इस आयाम के अनेक तत्व देखने को मिलते है –जैसे यौंन पहचान, यौंन व्यवहार, उनकी गतिविधि जिसमें मानसिक, शारीरिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक पहलु इत्यादि। इन तत्वों का संस्कृत नाटको के माध्यम से अध्ययन किया गया है। इस शोध के संदर्भ में यह बात अत्यधिक महत्वपूर्ण है की यह स्त्री यौनिकता(सेक्सुअलिटी)के रूपों को प्रदर्शित करने की राजनीति का भी विशेष रूप से अध्ययन करती है। इसी पहलू को ध्यान में रखकर संस्कृत के कुछ नाटको के विविध प्रकारों को संक्षेप में वर्णित किया गया है। क्योंकि इस पक्ष का बाहर न आना इस बात का संकेत है कि संस्कृत भाषा जिसे धर्मनिरपेक्ष बताया जाता है उसी संस्कृत भाषा की सहायता लेकर उसे संस्कृति की शक्ति का प्रारूप बनाया गया, और शक्ति का प्रारूप का अर्थ पितृसत्ता का मजबूत होना था और इस पितृसत्ता का आगमन वेदो के बाद से हुआ है क्योंकि वेदो के समय स्त्री को जो स्थान प्राप्त था वह स्थान इस काल के उपरांत नहीं मिल पाया। इस स्थान को समझने के लिए संस्कृत नाटको का अध्ययन किया गया। जिसमें कुछ नाटको के रूप को इस प्रकार से देखा जा सकता है– वेणी संहारम्, उत्तररामचरित्, माल्विकाग्निमित्रम्, विकमवंशियम्, अभिज्ञान शाकुंतलम, स्वपनवासदत्ता, मालतिमाधव, प्रियदर्शिका,रत्नावली, विद्वशालभंजिका, ललितरत्नमाला, कर्णसुंदरी, अनंगवती,कौशालिका, ग्रामेयी, इंदुलेखा, वनमाला, उषारागोदय, पारिजातमंजरी, चंद्रकला, सुभद्रा, प्रभावती परिणय, कुवलयावली, रामांक, पुष्पमाला, कनकलेखा, वृषभानुजा, कमलिनी कलहंस, इत्यादि।

स्त्री यौनिकता(सेक्सुअलिटी)की राजनीति

स्त्री का निर्मित और रहस्यमय संसार षुरू से ही, स्त्रीवादी सिद्धांत के लिए चुनौती पूर्ण रहा है, और आज भी स्त्री के बारे में अत्यधिक लिखा जा रहा है। इसके बावजूद, उसे नहीं समझ पाये है। इसके बारे में हजारों सालों में जो पुसंवादी समझ बनी थी उस जाल को आज भी पूर्ण रूप से नहीं समाप्त किया जा सका है। आज भी स्त्री के विषयों पर एक मत या एक राय कायम नहीं हो पाई है। आधुनिक काल में सबसे अधिक अगर विवाद है तो वह है स्त्री की यौनिकता, अर्थात सेक्सुअलिटी को लेकर। इसमें विवाद, संवाद और राजनितिक सक्रियता की अंतक्रिया को एक साथ देखा जा सकता है। स्त्री यौनिकता(सेक्सुअलिटी)को उदार, रूढ़िवादी या समाजवादी विषयों में निहित किया जा सकता है। यह अपने लहजे, भाषा और निहित कार्यवाही के संदर्भ में मानक या वर्णनात्मक भी हो सकता है।

प्राचीन समय से लेकर समकालीन समय के बदलते परिदृष्य में स्त्री और पुरूष का भेदभावपूर्ण रवैया का दृष्टिकोण समय के साथ बदलता रहा है। पुरूष और स्त्री के बीच ''जैविक विभिन्नता'' तो जरूर है, पर इस अंतर को दो भागों में में विभाजित कर दिया गया है जिसका स्वरूप प्राचीन काल से ही देखा जा सकता है जिसके उदाहरण साहित्य, घर,

[10] *G.N. Reddy, Kalidasa (2000). Shakuntala Recognized.*

[11] MORESHWAR RAMCHANDRA KALE, 2005, SVAPNAVASAVADATTA OF BHASA.

[12] V. Venkatachalam. A students' Handbook to Ratnavali of Sri Harsa, Madras, 1955.

[13] Manju Sharma, 22003, Rights and duties of women in sanskrit mahakavyas .

बाजार, हर स्थान पर देखें जा सकते है। जो हमेंषा ही एक बहस का मुद्धा रहा है, और इस विभिन्नता के बहुत से अवैज्ञानिक और असंगत सिद्धांत मौजूद रहे है। जिसे स्त्री यौनिकता(सेक्सुअलिटी)से समझा जा सकता है। स्त्री यौंनिकता(सेक्सुअलिटी), धर्मों और समय के अनुसार परिवर्तित होती रहीं है। स्त्री यौनिकता(सेक्सुअलिटी)से आषय जैविक लिंग, षरीर की छवि, आत्मसम्मान, व्यक्तित्व, यौन अभिविन्यास, मूल्य, व्यवहार, रिष्ते, गतिविधि विकल्प, और लिंग भूमिका, इत्यादि से है। जिसे वैदिक समय से ही इसे सकारात्मक बताया गया है। लिंग भेद तो एक प्राकृतिक स्वरूप है, जिसे बदलना तर्कसंगत व न्याय संगत दोनो ही नहीं है। परंतु पितृसत्ता का इस पर आवरण न ही तर्कसंगत है और न ही न्याय संगत। पितृसत्ता की अवधारणा एक सामाजिक–सांस्कृतिक परिकल्पना है। जिसका अर्थ है– एक ऐसी सामाजिक संरचना जिसमें महिलाओं पर पुरूषों का वर्चस्व रहता है और वे उनका षोषण व उत्पीड़न करते है। जिसे मनुस्मृति के समय से इसका अन्य रूप अर्थात पितृसत्तात्मक रूप में देखा जा सकता है जिसकी षुरूआत धर्म को आधार बनाकर की गई है। उदाहरणस्वरूप वेदों में महिलाओं को उपनिषद् की बहस में भाग लेने का अधिकार था जैसे गार्गी, मैत्रेयी इत्यादि जैसी महिलाएं गुरू के रूप में देखी जा सकती है।[14] स्त्री को वैदिक रीति–रिवाज में मौजूद होना महत्वपूर्ण था।[15] जिसे स्मृति काल में परिवर्तित कर दिया गया। इस अवधारणा के मूलभूत कारणों में, समाज में सत्ता संबंध का, असमान प्रकृति का होना है अर्थात् महिलाओं को पुरूषों के सामने निम्न या गौण स्थान दिया जाता है। परंतु वेंदो में स्त्रियों को उच्च स्थान प्रदान किया गया है जिसका व्यवहारिक रूप ऊपर दिए गए नाटकों मे देखने को मिलता है क्योंकि इन नाटकों में स्त्रियों को अलंकारिक रूप में दर्शाने का प्रयास किया गया है जों कहीं न कहीं मनुस्मिृति की आलोचना को प्रस्तुत करती है इस आलोचना को दर्शाने का कार्य नाअकों में जिस प्रकार के संवाद का प्रयोग किया गया है जिसे संसार चंद अभिज्ञान शाकुंतलम् नाट्य को स्पष्ट करते हुए अपनी कृति कुमार संभवम् के द्वारा स्पष्ट करते हुए बताते है कि स्त्री का पत्नी, पुत्री, जननी, इत्यादि प्रकार के विभिन्न रूपों में संसार के कल्याण शामिल होने के कारण विशेष महत्व का दर्जा प्रदान किया जाता है। विशेषकर भारत की संस्कृति स्त्री को विशेष स्थान देती है साथ ही महत्वपूर्ण पद प्रदान करती है, इसमें भारतीय संस्कृति के कवि कालिदास भी इस भावना से विमुख नही रह पाए, जहां उन्हे प्रशंसा या स्त्री के प्रति कुछ सकारात्मक करने का अवसर मिला वहां उन्होने खुलकर स्त्री की प्रशंसा की है और उसी क द्वारा स्त्री को महत्वपूर्ण पद देते हुए स्त्री के धर्म का वर्णन किया है। उनकी रचनाएं पत्नी के उच्च स्थान की प्राप्ति का संकेत करते हुए उल्लेख करती है कि धार्मिक संस्कारों के संपादन में सपत्नी ही प्रधान होती है।[16] रमा शंकर तिवारी अपनी पुस्तक 'महाकवि कालीदास' के द्वारा स्पष्ट करते है कि नाटको में कालिदास ने मानव सौंदर्य का हृदयवर्जक चित्रण प्रस्तुत किया है, उनकी दृष्टि में सौंदर्य देवी के समान है जो मानव और प्रकृति दोनो को समान रूप से देखते है।[17] तो वहीं सुरेंद्र देव शास्त्री की कृति 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' के द्वारा कालीदास के विचारों को स्पष्ट करते हुए बताते है कि नारी के शरीर में जो सौंदर्य प्रकाश करता है, वही प्रकृति के विभिन्न पदार्थो में भी दिखाई देता है। उन्होने प्रकृति की सहायता से रूप को संवारा है जिसे इस प्रकार वर्णित किया है–उसके लाल ओष्ठ लता की कोपलों के समान शोभते है, दोनो भुजाएं वृझ की कोमल शाखाओं के समान प्रतीत होती है और उसके अंगो में खिला हुआ नया यौवन लुभावने फूल के समान भासित होता है। कालिदास अंगो को उपमान के रूप में नियोजित करना नहीं भूलते। नयन और केश सौंदर्य का मुख्य केंद्र है। तो वहीं नितंभ नारी के सौंदर्य का मनमोहक आकर्षण है।[18] हरिदत्त शास्त्री के द्वारा प्रस्तुत कृति 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्'(1983) के द्वारा प्रस्तुत करते हुए बताते है कि कालिदास ने अपने नाटक क लिए महाभारत का सहारा लिया है जिसमें शकुंतला के सौंदर्यसंदोह में मधुर–मौग्ध्य एवं हाव–भावों के द्वारा वह 18 वर्ष की तरूणी प्रतीत होती है, जिसमें उसके विलास आर लावण्य आदि गुण स्वभाविक है, वह इन गुणो का अनुगमन नहीं करती अपितु ये गुणगान ही उसका अनुगमन करते है। जहां उसके सौंदर्य को देखकर राजा दुष्यंत प्रथम दर्शन में ही कह उठते है– अत्यंत मनोहर। कवि ने शकुंतला को प्रकृति पुत्री के रूप में प्रस्तुत किया है। जहां शकुंतला का अधर नवीनपत्तों के समान लाल है, इसकी दोनो भुजाएं कोमल शाखाओं के समान है, व अंगों में फूल की तरह आकर्षक यौवन व्याप्त है।[19] वहीं मालविकाअग्निमित्रम् में लिखित श्लोक –सर्वान्तः पुरवनिताव्यापार प्रतिनिवृत्त हृदयस्य। सा वामलोचना में स्नेहस्यैकामनीभूता॥ अर्थात् राजा का मन बहुत अशान्त था उसने विदूषक से बहुत शीघ्र ऐसा कोई उपाय ढूंढने के लिए कहा, जिससे

[14] Findly, Ellison, 2004, Women, Religion, and Social Change.

[15] Jamison, *Sacrificed Wife*, 14; Patton, " If the Fire Goes Out, the Wife Shall Fast."

[16] Chand, Sansar, 'Kumar Sambhavam', Sahitya Bhandaar, Meruth

[17] शंकर, रमा, 'महाकवि कालीदास'

[18] शास्त्री, सुरेंद देव, 'अभिज्ञानषाकुंतलम्'

[19] शास्त्री, हरिदत्त, 1983, 'अभिज्ञानषाकुंतलम्',

उसका मालविका से मिलन हो सके। विदूषक ने बड़ी निपुणता के साथ बकुलावलिका का विश्वास में लेकर उससे मालविका के हृदय में राजा के प्रति प्रेम बीज बोने के लिए कहा। इत्यादि प्रकार के नाटको में किए जाने वाला विवरण इस प्रकार का घोतक है जो यौनिकता का उदारवादी दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है।

आलोचनात्मक मूल्यांकन

मनुस्मृति और अर्थषास्त्र ऐसे ग्रंथों की श्रेणी में देखे जा सकते है जिसको एक पितृसत्तात्मक ढांचे के रूप में देखा गया है। क्योंकि कु अध्ययनों से ऐसा प्रतीत होता है कि मनुस्मृति व अर्थषास्त्र के द्वारा स्त्रियों को एक सीमा के दायरे में सीमित करने का प्रयास किर गया है। कर्तव्य व कार्यों में पूजा–पाठ, यज्ञ जैसे कार्यो को सिर्फ पुरूषों के लिए ही बना दिया गया, जिसमें स्त्रियों की कोई भी भागीदारी नही रखी गई। इसी प्रकार मनुस्मृति स्त्री के षरीर को नाभी से नीचे के अंग को अषुद्धो की श्रेणी में बताते है, अर्थात जो इन्द्रियां नाभि के ऊपर है वे सब पवित्र है और जो नाभि के नीचे है वे सब अषुद्ध।[20] तो वहीं इसके विपरित वेदो में उनकी यौनी को अग्नि के समान पवित्र बताया गया है। जिसका साक्ष्य वेन्डी डोनीजर की दा हिन्दू–एन अल्टरनेटिव हिस्ट्री में देखने को मिलता है।[21] इस प्रकार का वेदो और पुराणो के बाद होने वाला परिवर्तन, संस्कृत भाषा को अपने–अपने अनुसार व्याखित करने और पितृसत्ता को मजबूत करने के कारण हुआ है। क्योंकि स्मृति परंपरा का आगमन श्रुति परंपरा के आधार पर हुआ है जिसकों वेदों का संरक्षक माना जाता है, और यही कारण है कि वेदों को श्रुति से स्मृति तक आते–आते उसके लिखित प्रारूप में ही परिवर्तन कर दिया गया, जिसका आष्य वेदों से श्रुति और श्रुति से स्मृति तक व्याख्या के रूप को बदल दिया गया। उस व्याख्या को व्याखित करने के प्रकार में परिवर्तन होता गया। जिसका कारण वेद व पुराण के बाद स्त्रियों की दषा में गिरावट आती गई।

साधारण षब्दों में कहा जाये तो पितृसत्ता को बढ़ावा देने के लिए स्त्री यौनिकता(सेक्सुअलिटी)को पूर्णरूप से स्वीकार नहीं किया गया है। उदाहरणस्वरूप देखा जाए तो स्मृतिकाल के पहले वेदो–पुराणो के काल में स्त्रियों की सेक्सुअलिटी को उत्सव के रूप में मनाया जाता था उन्हे देवी का दर्जा प्रदान था उन्हे अत्यधिक उच्च्च दर्जा प्राप्त था। जिसे वास्तविक और व्यवहारिक रूप में भी देखा जा सकता है जैसे असम में उपस्थित कामाख्या मंदिर जहां स्त्री की यौनी की पूजा की जाती है। परंतु फिर भी इसे वेद से स्मृतिकाल के आते–आते निषेध के रूप में देखा जाने लगा। परंतु नाटकों में स्त्रियों की यौनिकता का अलंकारिक वर्णन अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को दर्षाता है जिसे आज सीमित रूप में देखा जाने लगा है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता एक ऐसा टर्म है जिसमें भाषण, लेखन और संचार व अन्य रूपों के माध्यम से स्वतंत्र रूप से किसी के विचारों और विचारों को व्यक्त करने का अधिकार, जिसमें दूसरों के चरित्र और झूठी या भ्रामक बयानों से उसकी प्रतिष्ठा को नुकसान न पहुचाया गया हो। यही अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का स्वरूप जिसे प्राचीन समय के साहित्यों जैसे संस्कृत नाटको में देखा जा सकता है। परंतु हमारे भारत में जो समानांतर विचार विकसित हुए है उसका अध्ययन करना है। क्योंकि यह विकास दो रूपों में हुआ है जहां एक ओर मनुस्मृति परंपरा देखने को मिलती है तो वहीं दूसरी ओर संस्कृत नाटक जैसे रचनात्मक स्रोत में देखने को मिलता है। यह दोनो ही स्रेात प्राचीन काल के रहे है और दोनो ही स्रोतो को लिया जाए तो दोनो एक दूसरे के विपरित या यों कहे कि विरोधाभासी प्रतीत होते है। और यही विरोधाभास वर्तमान समय में प्रतिबिंबित होता है उदाहरणस्वरूप आज जो माइंडसेट अर्थात मानसिकता विकसित हुई है वह नकारात्मक प्रतिबिंब को दर्षाता है जैसे आज समाज में लड़कियों द्वारा पहने जाने वाले वस्त्र चाहे वह स्कर्ट हो या साड़ी पर समाज के लोगो द्वारा उसे देखने या घूरना, प्रतिबिंबित करता है, कि हमारी स्मृति परंपरा का जो सोषल ओर्डर है वह कैसे स्थापित होगा। क्योंकि सोषल आर्डर में हम समाज को नहीं बल्कि स्त्री को दोष दे सकते है कि ऐसी पोषाक क्यों पहनी। आज यौनिकता को नैतिकता के साथ जोड़कर क्यों देखा जाने लगा है, अर्थात राजनीति की परिभाषा ही दूसरी है। राजनीति की परिभाषा को व्यापक होना चाहिए जहां स्त्री यौनिकता को भी स्थान दिया जाना चाहिए, क्योंकि स्त्री यौनिकता स्त्री की पहचान का ही एक भाग है जो कि स्त्री पहचान के साथ और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के साथ जुड़ा है। और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता एक राजनितिक विषय है। क्यों प्राचीन और समकालीन समय में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की दोहरी परिभाषा और दोहरा वर्णन है? और यही दोहरापन नैतिकता के नाम पर दूसरी दिषा ले रहा है।

वहीं आज का सशक्तिकरण प्राचीन युग के सशक्तिकरण की तुलना में नारी यौनिकता को कुछ आलोचना का समाना करना पड़ रहा है जो समाज को समाज की संसकृति को पीछे की धकेलती है। नारी यौनिकता दिशा सशक्त होते हुए भी इसकी दिशा आज कमजोर देखी जाने लगी है जिसके एक उदाहरण के रूप में नेटफ्लिक्स, उल्लू जैसी सीरिज में नारी का प्रस्तुतिकरण सेक्स बाजार में परोसा जाने लगा है जबकि जीवन शैली और सेक्स जैसे विचार हमारे शास्त्रों में कामशास्त्र को मुख्य माना गया है जिसका समकालीन युग में तुलना करना शास्त्रो के विपरित है।

---

[20] ऊर्ध्वंनाभेर्यानिखानितानिमेध्यानिसर्वशः।यान्यधस्तान्यमेध्यानि देहाच्चैवमलाश्च्युताः।।५.१३२[१३०ं] ।।

[21]Doniger , Wendy, 2009, The hindus-An alternative history .

RRIJM 2015, All Rights Reserved

संदर्भ

1. *Bailey, J. Michael; Vasey, Paul; Diamond, Lisa; Breedlove, S. Marc; Vilain, Eric; Epprecht, Marc (2016). "Sexual Orientation, Controversy, and Science". Psychological Science in the Public Interest. 17 (2): 45–101.*
2. Gray, S. (1990) 'Women in South African theatre', South African Theatre Journal 4, 1:75–87
3. Brandon, James R. 1981. Introduction. In Baumer and Brandon (1981, xvii-xx).
4. Rachel Van M. Baumer; James R. Brandon (1993). *Sanskrit Drama in Performance*. Motilal Banarsidass. pp. 25
5. Richmond, Farley P., Darius L. Swann, and Phillip B. Zarrilli, eds. 1993. *Indian Theatre: Traditions of Performance.* U of Hawaii P
6. Parameshwardin Pandey and Awani kumar, (2012), Venisamhara Nataka of Bhattanarayana, edi. 'Sudha'-Sanskrit & Hindi Commentaries, Chaukhamba Surbharti Prakashan.
7. Shastri Ghate, (1895), The *Uttara Rama Charita* of Bhavabhuti. With Sanskrit commentary, English translation by Vinayak Sadashiv Patvardhan. The Nyaya Sudha Press,
8. *Kalidasa (1891). The Malavikágnimitra: A Sanskrit play by Kalidasa. Charles Henry Tawney (trans.). Thacker, Spink and Company, Calcutta.*
9. Pandit, P. S. (1879). The Vikramorvashiyam: A Drama in Five Acts by Kalidasa (Ed.) The Department of Public Instruction, Govt. Central Book Depot, Bombay
10. *G.N. Reddy, Kalidasa (2000). Shakuntala Recognized. Translated, Victoria, BC, Canada: iUniverse.*
11. MORESHWAR RAMCHANDRA KALE, 2005, SVAPNAVASAVADATTA OF BHASA, PUBLISHED BY MOTILAL BANARSIDASS.
12. V. Venkatachalam. A students' Handbook to Ratnavali of Sri Harsa, Madras, 1955. pp. 3+228
13. Manju Sharma, rights and duties of women in sanskrit mahakavyas, estern book linkers, 2003.
14. Findly, Ellison, 2004, Women, Religion, and Social Change, pages 37-58
15. Jamison, *Sacrificed Wife*, 14; Patton, " If the Fire Goes Out, the Wife Shall Fast."
16. Chand, Sansar, 'Kumar Sambhavam', Sahitya Bhandaar, Meruth
17. शंकर, रमा, 'महाकवि कालीदास', चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी.
18. शास्त्री, सुरेंद देव, 'अभिज्ञानषाकुंतलम्' राम नारायण लाल बेनी प्रसाद, इलाहाबाद.
19. शास्त्री, हरिदत्त, 1983, 'अभिज्ञान"ाकुंतलम्', ग्रंथम् रामबाग, कानपुर
20. Doniger , Wendy, 2009, The hindus-An alternative history .

RRIJM 2015, All Rights Reserved